

दलित महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति और सशक्तिकरण पर एक अध्ययन।

Neha Maurya*

Research scholar, Sociology department, Lucknow University, Lucknow

सार - लैंगिक असमानता का मुद्दा अधिक चिंतित है। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि यह मुद्दा मुख्य रूप से महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण से संबंधित है। हमारी सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति निम्न है और सामाजिक पदानुक्रम के कारण दलित महिलाओं की स्थिति तुलनात्मक रूप से बहुत कम है, आठ तरीके हैं यानी संसाधनों तक पहुंच, आय पर नियंत्रण आदि जिससे दलित महिलाओं को मजबूत स्थिति में लाया जा सकता है। इसी तरह, सशक्तिकरण के मुद्दों की समझ और बाद की रणनीतियों के गठन से दलित महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का उत्थान हो सकता है। भारत में महिलाओं की स्थिति पिछले सहस्राब्दियों में कई महान परिवर्तनों के अधीन रही है। भारत में महिलाएं पुरुषों की तुलना में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक रूप से कमजोर हैं। अधिकांश दलित महिलाएं स्वच्छता के काम में लगी हुई हैं। साथ ही, एक सफाई कर्मचारी का जीवन अस्वस्थ परिस्थितियों से ग्रस्त होता है। सशक्तिकरण के मुद्दों की समझ और बाद की रणनीतियों के गठन से दलित महिलाओं की स्थिति का उत्थान हो सकता है।

कीवर्ड - दलित महिला, सामाजिक-आर्थिक, स्थिति, और सशक्तिकरण।

-----X-----

परिचय

किसी भी देश की समृद्धि का पुनर्जन्म अर्थव्यवस्था में महिलाओं और महिलाओं की समृद्धि पर निर्भर करता है; उन्हें पर्याप्त महत्व नहीं दिया जाता है। महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार तक पहुंच में लिंग-विशिष्ट समस्याएं हैं। फिर से महिलाओं का संपत्ति पर ज्यादा नियंत्रण नहीं है। महिलाओं को उनके काम के लिए न्यूनतम मजदूरी या पैसा दिया जाता है। समाज और अर्थव्यवस्था में उनके योगदान को आमतौर पर नजरअंदाज कर दिया जाता है। पिछले कुछ वर्षों में भारत में महिलाओं की स्थिति में बड़े बदलाव हुए हैं। मध्यकाल में समान प्रासंगिकता से कई महिलाओं के समान अधिकारों को प्रोत्साहित किया जाता है, प्राचीन काल के पुरुषों के समान प्रासंगिकता के साथ; भारत में महिलाओं का इतिहास एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। भारत में महिलाओं की स्थिति बदल रही है।

भारत में दलित महिलाएं कार्यस्थलों में और घर में दुर्व्यवहार और इस्तेमाल और शोषित श्रम के साथ घोर गरीबी के संयोजन के साथ सबसे खराब प्रकार का अस्तित्व जीती हैं। नारीवादी समाजशास्त्री गेल ओमवेट ने भारतीय दलित महिलाओं को

दलित के बीच दलित कहा है। डॉ अम्बेडकर ने अपने विचार का समर्थन करने के लिए हिंदू जाति व्यवस्था मिट्टी के बर्तनों के पिरामिड के रूप में एक के ऊपर एक स्थापित की। न केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय सबसे ऊपर हैं और उस जाति की महिलाएं कुचली और धुली हुई शक्ति की तरह नीचे हैं। तो सबसे नीचे दलित हैं और उनके नीचे दमित दलित महिलाएं हैं। दलित महिलाओं के मुद्दे अन्य भारतीय महिलाओं से अलग हैं। वे सभी प्रकार के मानव अधिकारों, शिक्षा, आय, गरिमा, सामाजिक स्थिति, धार्मिक अधिकारों आदि से वंचित हो गए हैं। उन्हें आर्थिक अभाव से आवश्यक बाहरी दुनिया का सामना करना पड़ता है, और आजीविका के लिए कमाने की तत्काल आवश्यकता होती है। इस प्रकार, उनकी अधीनता अधिक तीव्र है- दलित होने के कारण उन्हें उच्च जाति के पुरुषों और महिलाओं द्वारा समान रूप से और उनके अपने पुरुषों द्वारा बहुत अवमानना के साथ व्यवहार किया जाता है। इसके बावजूद उन्होंने अपनी कड़ी मेहनत और श्रम से भारत के विकास में बहुत योगदान दिया है। लेकिन, उनके योगदान को कभी मान्यता नहीं मिली। उनकी आवाज और विरोध लगभग अदृश्य हैं। वास्तव में, जब हम विकास प्रक्रिया में महिलाओं के हाशिए पर जाने, या गरीबी के नारीकरण या भारत में

असंगठित क्षेत्र में महिलाओं के योगदान की बात करते हैं, तो हम उनकी विशिष्टता के बारे में जागरूक हुए बिना भी उनका जिक्र कर रहे हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि भारत में मुख्यधारा के महिला आंदोलन ने भी दलित महिलाओं की दयनीय स्थिति की उपेक्षा और उपेक्षा की। दलित महिलाओं के जीवन पर अब तक बहुत कम साहित्य तैयार किया गया है।

महिलाओं में दलितता

महिलाओं की कर्मकांड अशुद्धता के बारे में जो विचार उनकी गतिविधियों पर शारीरिक बाधाओं के साथ उत्पन्न हुए, उन्होंने जोर दिया कि महिलाओं के मासिक धर्म, प्रजनन और यौन कार्यों ने उन्हें स्वाभाविक रूप से अशुद्ध बना दिया है। उन विचारों ने जाति के भीतर उसकी निम्न कर्मकांडीय स्थिति और जाति के हित में अपनी स्वयं की कामुकता को नियंत्रित करने में असमर्थता को उचित ठहराया। उसकी यौन अतृप्ति सभी समस्याओं की जड़ थी। और निचली जातियों की अपनी महिलाओं की कामुकता को नियंत्रित करने में विफलता आंशिक रूप से उन्हें अपवित्र बनाती थी। इस विचार ने जाति विभाजन को मजबूत किया, क्योंकि यदि निम्न जातियाँ ब्राह्मणों की तरह व्यवहार करतीं, तो भेद मिट जाते। इसलिए लिंग विभाजन ने जाति विभाजन को मजबूत किया, और लिंग विचारधारा ने न केवल पितृसत्ता की संरचना को बल्कि जाति के संगठनों को भी वैध ठहराया। इसलिए सभी जाति समूहों की महिलाओं ने इस दलितता का अनुभव किया है, हालांकि सबसे बुरी तरह से पीड़ित सबसे निचली जाति और बहिष्कृत समूहों की महिलाएं थीं, जिन्होंने उच्च जातियों और अपनी जाति के पुरुषों दोनों के हाथों पितृसत्तात्मक दमन का शिकार किया।

दलित महिलाओं का सशक्तिकरण

महिलाओं के लिए स्थिति की समानता प्राप्त करना उन विशिष्ट उद्देश्यों में से एक था जो भारत के संविधान की राज्य नीति की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार और निर्देशक सिद्धांत में निहित हैं। सामाजिक परिवर्तन एक जटिल प्रक्रिया है जो महिलाओं के विभिन्न वर्गों को समान रूप से प्रभावित नहीं करती है इसलिए, महिलाओं की स्थिति को आसानी से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। इस देश की राजनीतिक सत्ता लंबे समय से कुछ उच्च जाति के वर्चस्व वाले पुरुषों का एकाधिकार रही है, जिसने दलितों को बेहतरी के लिए बदलाव से वंचित कर दिया, जिसमें दलित महिलाओं की स्थिति नगण्य है। यह स्पष्ट रूप से समाज की असमानताओं की डिग्री को दर्शाता है। सत्ता का आनंद लेने वाली महिला नेताओं ने भी दलित महिलाओं की उपेक्षा की है और अपनी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति में सुधार

करने की कोशिश नहीं की है। लेकिन उन्होंने महिलाओं के कल्याण के लिए सामाजिक कार्यक्रम, कानून बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई होगी। सक्रिय राजनीति में उनके हिस्से और राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया में उनकी क्षमता पर विचार करने में दलित महिलाओं की उपेक्षा करना खेदजनक और दुर्भाग्यपूर्ण है। राजनीति में संगठनात्मक संरचना, नेतृत्व और सरकार में सत्ता के बंटवारे पर ज्यादातर पुरुषों का ही वर्चस्व होता है। पैसा और जाति महत्वपूर्ण कारक हैं जो भारतीय राजनीति में मुख्य भूमिका निभाते हैं।

महिलाओं की बदलती स्थिति

जब हम किसी विशेष समाज का अध्ययन करना चाहते हैं तो हमें उस विशेष समाज में महिलाओं की स्थिति पर ध्यान देना चाहिए। राल्फ लिंटन के अनुसार प्रस्थिति का अर्थ है किसी व्यक्ति का विशिष्ट स्थान समाज में विशेष रूप से समय की तलाश करता है किसी व्यक्ति की स्थिति उस समाज में किए गए एकल या भूमिकाओं के समूह द्वारा निर्धारित की जाती है। भारतीय समाज में पुरुषों और महिलाओं की सामाजिक स्थिति असमान है। भारत में हर काल में स्थिति बदली, 21वीं सदी में महिलाओं की स्थिति मध्यकाल की तुलना में अधिक थी। लेकिन भारतीय महिलाओं की स्थिति पश्चिमी समाज में उससे कम है।

प्राचीन काल में महिलाओं की स्थिति

यह एक पुरुष प्रधान समाज था लेकिन महिलाओं को पुरुषों के समान स्वतंत्रता थी। महिलाओं को शिक्षा का अधिकार था अर्थ परिपक्व उम्र में किया गया था। महिलाओं की राय महत्वपूर्ण परिवार है। समाज द्वारा पुनर्विवाह की अनुमति थी। वह सामाजिक समारोहों और समारोहों में भाग लेती थी।

इस अवधि के बाद महिलाओं ने कुछ सुविधाओं को खोना शुरू कर दिया। यह महिलाओं पर और प्रतिबंधों की शुरुआत थी। गृह मामलों की जिम्मेदारी उन्हें दी गई थी और उम्मीद की जा रही थी कि चुला और बच्चे को मोड़ने वाला व्यवहार, इससे पहले रामायण, महाभारत और स्मृतिसूत्र धार्मिक साहित्य में महिलाओं के बारे में विपरीत दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया था। एक बार जब वह देवी की पूजा की जाती थी और साथ ही वह सामाजिक नियमों और विनियमों से बंधी हुई थी, मनु ने उसे समाज में सबसे कम स्थान दिया, तो उसे शिक्षा और सामाजिक कार्यों, त्योहारों और अनुष्ठानों में भाग लेने के लिए प्रतिबंधित कर दिया गया, पुरुषों ने महिलाओं पर हावी होना शुरू कर दिया। उसके साथ एक गुलाम की तरह व्यवहार करें।

पुरुषों की इच्छा थी कि वह पुरुषों पर निर्भर हो जाए। वह एक जीवित मशीन बन जाती है।

वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति

वैदिक काल में, महिलाओं को सभी प्रकार के अधिकार प्राप्त थे जो मनुष्य के लिए आवश्यक हैं। महिलाओं को शिक्षा की सभी शाखाओं तक पहुंचने का अधिकार था, और महिलाओं को भी पुरुषों के समान स्थान प्राप्त था। धार्मिक आयोजनों में महिलाओं की अहम भूमिका होती थी। यौवन प्राप्त करने के बाद लड़कियां स्वयंवर में अपना जीवन साथी चुनने के लिए स्वतंत्र थीं। उनके पास वेदों के अध्ययन सहित शिक्षा को आगे बढ़ाने के सभी अवसर थे और वे उपनयन के लिए भी पात्र थे। वे एक विवाह को समाप्त कर सकते थे और विधवाओं का पुनर्विवाह कर सकते थे। कौटिल्य के समय में भी नारी गरिमा के साथ रहती थी। वैदिक भजन जो पहले मौजूद थे और जिनका ईमानदारी से पालन किया जा रहा था, हमें सूचित करते हैं कि पति और पत्नी दोनों समान रूप से परिवार, संपत्ति के संयुक्त मालिक थे और एक बेटा चाहे विवाहित हो या अविवाहित, अपने मृत पिता की संपत्ति में विरासत का एकमात्र अधिकार बरकरार रखती थी। महिलाएं सभी सामाजिक-धार्मिक अनुष्ठानों और समारोहों में पुरुषों के साथ सक्रिय रूप से शामिल और जुड़ी हुई थीं। बहुविवाह के उदाहरण दुर्लभ थे और मुख्यतः शासक वर्ग तक ही सीमित थे। दहेज प्रथा प्रचलित थी लेकिन केवल अमीर और शाही परिवारों में।

ब्रिटिश काल में महिलाओं की स्थिति

कुछ के लिए, ब्रिटिश काल भारत के लिए गुलामी का दिन था, दूसरों के लिए यह अवधि सामाजिक और धार्मिक विकसित परिवहन सुविधाओं के लिए भारतीय महिलाओं के लिए भगवान का उपहार था जैसे लॉग रोड और रेलवे और पश्चिमी शिक्षा की सुविधाएं। उन्होंने परेशान करने वाले रीति-रिवाजों को भी रोकना शुरू कर दिया महिलाओं को नीचा दिखाया; उन्होंने औद्योगिकीकरण पश्चिमीकरण और शहरीकरण को प्रेरित किया। इन सभी कारकों ने भारतीय समाज में परिवर्तन लाने में समान रूप से योगदान दिया है। परिवर्तन की लहर के साथ अनेक समाज सुधारक उभरे। राजा राममोहन राय के ब्रह्म समाज, आर्य समाज, परमहंस सभा, रामकृष्ण मिशन ने महिलाओं की पतित स्थिति को ऊपर उठाने के लिए संघर्ष किया था। महिलाओं की समस्याओं को समाचार पत्रों में प्रकाशित किया और महिलाओं को पुरुषों के साथ समानता की मांग की, उन्होंने महिलाओं की भलाई के लिए संघर्ष किया, अंग्रेजों ने भी महिलाओं के लिए संघर्ष का समर्थन किया और शसती प्रथा जैसे सबसे खराब रीति-रिवाजों पर प्रतिबंध लगाने के लिए कानून बनाए। राजा राम

मोहन राय, विद्यासागर और अन्य समाज सुधारकों ने पुनर्विवाह के कानून को लागू करने की कोशिश की और उनके समर्थन के कारण विधवाओं के पुनर्विवाह का कानून 1865 में अंग्रेजों द्वारा पारित किया गया।

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में महिलाओं की स्थिति

स्वतंत्रता के बाद की अवधि भारत में महिलाओं की प्रगति के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर होने के लिए, सामाजिक-सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलन थे, जिसने उस अवधि के दौरान महिलाओं की स्थिति में जबरदस्त बदलाव लाया, जब भारतीय संविधान ने समाज के सभी वर्गों के बीच समानता प्रदान की थी। उपयुक्त आर्थिक नीति और सामाजिक कल्याण कार्यक्रम। वर्ष 1950 में भारत सरकार ने पहली बार महिला विकास के लिए निगम में भारत के सभी जीवन योजना आयोग के सभी क्षेत्रों में लोगों के जीवन स्तर को बढ़ाने और लोगों के लिए अवसरों को खोलने के लिए योजना आयोग की स्थापना की, जो साबित हुआ महिलाओं के चहुंमुखी विकास में मील का पत्थर साबित होगा। छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में महिलाओं और विकास पर एक अलग अध्याय को योजना दस्तावेज में शामिल किया गया था। प्रारंभ में इसने स्थिति की समीक्षा की और फिर इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि कई संवैधानिक प्रावधानों और सुरक्षा उपायों के बावजूद महिलाएं जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों से बहुत पीछे हैं। योजना दस्तावेज में इस बात पर जोर दिया गया था कि महिलाओं के विकास के लिए प्रमुख रणनीति तीन प्रकार की शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य थी। सातवीं, आठवीं और नौवीं पंचवर्षीय योजना में भी महिला सशक्तिकरण के लिए विशेष योजना, नीति लागू की गई।

भारत में दलित महिलाओं की स्थिति

दलित महिलाएं दुनिया में कहीं भी सबसे बड़े सामाजिक विभाजनों में से एक हैं। वे उनके खिलाफ उत्पीड़न और भयंकर शोषण कर रहे हैं। उनके अपने शरीर, कमाई और जीवन पर कोई नियंत्रण नहीं है। उनके खिलाफ हिंसा, शोषण और उत्पीड़न की तीखी अभिव्यक्ति भूख, कुपोषण, बीमारी, शारीरिक और मानसिक यातना, बलात्कार, अशिक्षा, अनुचित तरीके से, बेरोजगारी, असुरक्षा और अमानवीय व्यवहार के रूप में प्रकट होती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर की लड़कियों और महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक जीवन में पुरुषों के लिए समान अधिकार सुनिश्चित करने के उपाय, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव मूल रूप से अप्राकृतिक है और मानवीय गरिमा एक अपराध है। लेकिन भारतीय समाज में तेज-तरार

सामाजिक समूहों में असंख्य असमानताएँ हैं। दलित महिलाओं का सबसे बुरा स्थान भारतीय समुदाय में है। दलित समाज में दलित महिलाओं की स्थिति इतनी दयनीय है, वे सभी प्रकार की शिकार हो जाती हैं और 1995 और 1997 के बीच 90 से 95% मामलों में, और 1950 के दशक से दलित उत्पीड़न की प्रतिक्रिया में नाटकीय वृद्धि हुई है और 1990 के दशक। सभी भारत में पंजीकृत हैं, जिनमें से 1,617 दलित उत्पीड़कों को 12,951 घायल हुए और 2824 बलात्कार और 31,376 अन्य अपराधों के लिए जिम्मेदार हैं। तो रूथ मनोरमा आपकी पीएपी हैष् पृष्ठभूमि की जानकारी भारत में दलित महिलाओं को दलित महिलाओं की स्थिति के लिए विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है भारत में। वे दुनिया के किसी भी सबसे बड़े सामाजिक विभाजन में से एक हैं, और दुनिया की 2 आबादी दलित हैं।

प्राचीन काल में महिलाओं की स्थिति

यह एक पुरुष प्रधान समाज था लेकिन महिलाओं को पुरुषों के समान स्वतंत्रता थी। महिलाओं को शिक्षा का अधिकार थाय अर्थ परिपक्व उम्र में किया गया था। महिलाओं की राय महत्वपूर्ण परिवार है। समाज द्वारा पुनर्विवाह की अनुमति थी। वह सामाजिक समारोहों और समारोहों में भाग लेती थी।

इस अवधि के बाद महिलाओं ने कुछ सुविधाओं को खोना शुरू कर दिया। यह महिलाओं पर और प्रतिबंधों की शुरुआत थी। गृह मामलों की जिम्मेदारी उन्हें दी गई थी और उम्मीद की जा रही थी कि 'चुला' और 'बच्चे' को मोड़ने वाला व्यवहार, इससे पहले 'रामायण', 'महाभारत' और 'स्मृतिसूत्र' धार्मिक साहित्य में महिलाओं के बारे में विपरीत दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया था। एक बार जब वह देवी की पूजा की जाती थी और साथ ही वह सामाजिक नियमों और विनियमों से बंधी हुई थी, 'मनु' ने उसे समाज में सबसे कम स्थान दिया, तो उसे शिक्षा और सामाजिक कार्यों, त्योहारों और अनुष्ठानों में भाग लेने के लिए प्रतिबंधित कर दिया गया, पुरुषों ने महिलाओं पर हावी होना शुरू कर दिया। उसके साथ एक गुलाम की तरह व्यवहार करें। पुरुषों की इच्छा थी कि वह पुरुषों पर निर्भर हो जाए। वह एक जीवित मशीन बन जाती है। उसकी भावनाओं का कोई मूल्य नहीं था। 'बलविवाह' और 'जरथा विवाह' की प्रथा शुरू की गई थी। महिलाओं ने प्रति परिपक्व उम्र में बच्चों को जन्म दिया। उसके व्यक्तित्व का विकास रुक गया था। उसकी दुनिया परिवार द्वारा सीमित थी। महिलाओं के लिए विवाह ही एकमात्र ऐसा अनुष्ठान था जो परिवर्तनशील नहीं था। पति की मृत्यु के बाद वह सती के पास गई थी। वह पुनर्विवाह नहीं कर सकती थी। उनका जीवन दुखों से भरा था और विधवाओं के लिए जीवन के सभी रास्ते बंद हो गए थे - महिलाओं को किसी भी तरह का दर्जा नहीं दिया गया था, वह

पुरुषों के लिए योग्य थीं, विभिन्न विवाहों की अनुमति थी जो महिलाओं के लिए और अधिक जटिलताएं और दुःख का कारण बनती थीं।

वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति

वैदिक काल में, महिलाओं को सभी प्रकार के अधिकार प्राप्त थे जो मनुष्य के लिए आवश्यक हैं। महिलाओं को शिक्षा की सभी शाखाओं तक पहुंचने का अधिकार था, और महिलाओं को भी पुरुषों के समान स्थान प्राप्त था। धार्मिक आयोजनों में महिलाओं की अहम भूमिका होती थी। यौवन प्राप्त करने के बाद लड़कियां स्वयंवर में अपना जीवन साथी चुनने के लिए स्वतंत्र थीं। उनके पास वेदों के अध्ययन सहित शिक्षा को आगे बढ़ाने के सभी अवसर थे और वे उपनयन के लिए भी पात्र थे। वे एक विवाह को समाप्त कर सकते थे और विधवाओं का पुनर्विवाह कर सकते थे। कौटिल्य के समय में भी नारी गरिमा के साथ रहती थी। वैदिक भजन जो पहले मौजूद थे और जिनका ईमानदारी से पालन किया जा रहा था, हमें सूचित करते हैं कि पति और पत्नी दोनों समान रूप से परिवार, संपत्ति के संयुक्त मालिक थे और एक बेटी चाहे विवाहित हो या अविवाहित, अपने मृत पिता की संपत्ति में विरासत का एकमात्र अधिकार बरकरार रखती थी।

महिलाओं की बदलती स्थिति

जब हम किसी विशेष समाज का अध्ययन करना चाहते हैं तो हमें उस विशेष समाज में महिलाओं की स्थिति पर ध्यान देना चाहिए। राल्फ लिंटन के अनुसार "प्रस्थिति का अर्थ है किसी व्यक्ति का विशिष्ट स्थान समाज में विशेष रूप से समय की तलाश करता है" किसी व्यक्ति की स्थिति उस समाज में किए गए एकल या भूमिकाओं के समूह द्वारा निर्धारित की जाती है। भारतीय समाज में पुरुषों और महिलाओं की सामाजिक स्थिति असमान है। भारत में हर काल में स्थिति बदली, 21वीं सदी में महिलाओं की स्थिति मध्यकाल की तुलना में अधिक थी। लेकिन भारतीय महिलाओं की स्थिति पश्चिमी समाज में उससे कम है।

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में महिलाओं की स्थिति

स्वतंत्रता के बाद की अवधि भारत में महिलाओं की प्रगति के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर होने के लिए, सामाजिक-सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलन थे, जिसने उस अवधि के दौरान महिलाओं की स्थिति में जबरदस्त बदलाव लाया, जब भारतीय संविधान ने समाज के सभी वर्गों के बीच समानता प्रदान की थी। उपयुक्त आर्थिक नीति और

सामाजिक कल्याण कार्यक्रम। वर्ष 1950 में भारत सरकार ने पहली बार महिला विकास के लिए निगम में भारत के सभी जीवन योजना आयोग के सभी क्षेत्रों में लोगों के जीवन स्तर को बढ़ाने और लोगों के लिए अवसरों को खोलने के लिए योजना आयोग की स्थापना की, जो साबित हुआ महिलाओं के चहुंमुखी विकास में मील का पत्थर साबित होगा। छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में महिलाओं और विकास पर एक अलग अध्याय को योजना दस्तावेज में शामिल किया गया था। प्रारंभ में इसने स्थिति की समीक्षा की और फिर इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि कई संवैधानिक प्रावधानों और सुरक्षा उपायों के बावजूद महिलाएं जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों से बहुत पीछे हैं। योजना दस्तावेज में इस बात पर जोर दिया गया था कि महिलाओं के विकास के लिए प्रमुख रणनीति तीन प्रकार की शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य थी।

भारत में दलित महिलाओं की स्थिति

दलित महिलाएं दुनिया में कहीं भी सबसे बड़े सामाजिक विभाजनों में से एक हैं। वे उनके खिलाफ उत्पीड़न और भयंकर शोषण कर रहे हैं। उनके अपने शरीर, कमाई और जीवन पर कोई नियंत्रण नहीं है। उनके खिलाफ हिंसा, शोषण और उत्पीड़न की तीखी अभिव्यक्ति भूख, कुपोषण, बीमारी, शारीरिक और मानसिक यातना, बलात्कार, अशिक्षा, अनुचित तरीके से, बेरोजगारी, असुरक्षा और अमानवीय व्यवहार के रूप में प्रकट होती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर की लड़कियों और महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक जीवन में पुरुषों के लिए समान अधिकार सुनिश्चित करने के उपाय, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव मूल रूप से अप्राकृतिक है और मानवीय गरिमा एक अपराध है। लेकिन भारतीय समाज में तेज-तर्रार सामाजिक समूहों में असंख्य असमानताएँ हैं। दलित महिलाओं का सबसे बुरा स्थान भारतीय समुदाय में है। “दलित समाज में दलित महिलाओं की स्थिति इतनी दयनीय है, वे सभी प्रकार की शिकार हो जाती हैं और 1995 और 1997 के बीच 90 से 95: मामलों में, और 1950 के दशक से दलित उत्पीड़न की प्रतिक्रिया में नाटकीय वृद्धि हुई है और 1990 के दशक। सभी भारत में पंजीकृत हैं, जिनमें से 1,617 दलित उत्पीड़कों को 12,951 घायल हुए और 2824 बलात्कार और 31,376 अन्य अपराधों के लिए जिम्मेदार हैं। “तो रूथ मनोरमा आपकी पीएपी है” पृष्ठभूमि की जानकारी “भारत में दलित महिलाओं को दलित महिलाओं की स्थिति के लिए विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है भारत में। वे दुनिया के किसी भी सबसे बड़े सामाजिक विभाजन में से एक हैं, और दुनिया की 2: आबादी दलित हैं। दलित महिलाओं के साथ तीन बार भेदभाव किया जाता है, वे गरीब हैं, वे महिलाएं हैं और वे दलित हैं। भारतीय महिलाओं की कुल संख्या में दलित महिलाओं की

संख्या 20 करोड़ दलित हैय भारतीय महिलाओं की संख्या 16.3 है। दलित और दलित महिलाओं के बराबर हैं हालांकि, दलित महिलाओं को उनका अधिक बार सामना करना पड़ता है।

साहित्य की समीक्षा

घोष एण्ड घोष (1997) की पुस्तक दलित वीमेन में दलित शब्द का अर्थ बताते हुए उसके ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की चर्चा की है। जाति व जाति में उसके निम्न स्थान जो वर्ण द्वारा विभजित है। दलित महिलाओं की स्थिति उनकी जाति के साथ ही साथ उनके लिंग-भेद के कारण और भी निम्न है। लेखक ने बताया कि दलित महिलाओं की स्थिति सामान्य भारत समाज व दलित समाज दोनों में किस प्रकार की है। दलितों के उत्थान के लिए सरकार द्वारा बनाए गए विकास कार्यक्रमों की चर्चा विस्तार से की गई है। इस पुस्तक में दलित-पत्नियां, दलित-कलाकार, दलित-कर्मचारी, ग्रामीणदलित-महिलाओं, व शहरी दलित-महिलाओं के विभिन्न आयामों की विस्तारपूर्वक चर्चा की है।

मलिक (1999) के लेख अनटेचबिलटी एण्ड दलित वीमेन आपरेशन (इकाॅनामिक एण्ड पालिटिकल वीकली) में बताया है कि पूर्ण रूप से दलित और नारीवाद आन्दोलन ही दलित स्त्रियों की मुक्ति के लिए पर्याप्त नहीं है। बल्कि उन्हें उनके साथ हो रहे भेदभावपूर्ण व्यवहार का व्यक्तिगत तौर पर विरोध करना चाहिए। अतः उनके साथ आधुनिक युग में भी हो भेदभाव पूर्ण व्यवहार की चर्चा की है। रूथ (2002) के प्रकाशित पेपर दलित वीमेन द डाउनट्रोड आॅफ द डाउनट्रोडन (इकाॅनामिक एण्ड पालिटिकल वीकली) में भारत के हिंसा के शिकार हुए समुदायों में से एक है। जबकि भारत दलितों को संवैधानिक अधिकार भारत सरकार द्वारा सुनियोजित करवाये गए है। इन्होंने अन्त में यह कहा कि दलित मुक्ति चाहते हैं। दलित और खासतौर से दलित महिलाओं के साथ हो रहे अमानवीय व्यवहार व उनके साथ भेदभाव के रूप में अशिक्षा, मानवीय गरिमा, छुआछूत, खराब स्वास्थ्य और आर्थिक असमानता शामिल हैं

ओमवेत (2005) के प्रकाशित लेख कैपटिलाज्म एण्ड ग्लोबलाइजेशन दलित एण्ड आदिवासी (इकानमी एण्ड पालिटिकल वीकली) में बताया है कि दलित महिलाएं एवं आदिवासी व अन्य किस प्रकार से भूमण्डलीकरण से किसी भी स्थिति में राजनैतिक व प्रजातांत्रित रूप से उनकी स्वयं की परिस्थितियों के अधिकारों की मांग करते हैं। वे ऐसे आन्दोलनों की भी बात करते हैं। जिनका नेतृत्व हमेशा पुष्प वर्ग व उच्च अभिजन वर्ग के हाथों में रहा है। शाह (2007) की पुस्तक दलित आइडेन्टिटी एण्ड पॉलिटिक्स दलित आस्मिता और

उनके राजनैतिक सहभागिता से सम्बन्धित मुद्दों को सम्मिलित किया है। पहला-भारतीय समाज में दलितों के लिए समानता, दूसरा-पूँजीवाद द्वारा जाति व्यवस्था का कमजोर होना, तीसरा-दलितों में बढ़ती सामाजिक गतिशीलता, चौथा-दलितों में राजनैतिक चेतना का विकास। हो। दूवे (2007) की पुस्तक आधुनिकता के आइर्न में दलित की बुनियादी मान्यता यह है कि धर्म और परम्परा ही नहीं, आधुनिकता के दायरे में भी दलित समस्या का पूरा समाधान नहीं सम्भव हो पा रहा। आधुनिकता के सापेक्ष इस समस्या के हल और दिक्कतों का अनुसंधान करती है। विकासशील समाज का अध्ययन पीस द्वारा प्रायोजित लोकचिंतन ग्रन्थमाला की इस पहली कड़ी में समझाने की कोशिश की गई है कि साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष से लेकर एक आधुनिक राष्ट्र निर्माण की विराट परियोजना चलाने के दौरान दलित समस्या पूरी तरह दूर क्यों नहीं हुई। लुईस (2008) ने अपने प्रकाशित पेपर दलित असंब्रेशन इन नार्थ इण्डिया (अ वीव फ्राम बीलो) में उत्तर भारत में दलितों की सामाजिक स्थिति की चर्चा की है। इनका कहना है कि दमन एवं मुक्ति जैसी अवधारणाएं समाजशास्त्रीय विमर्श का केन्द्र बिन्दु बन चुकी है। पिछले कई वर्षों में हुए दलित आन्दोलनों ने दलितों को एक विशिष्ट पहचान प्रदान की है। इन्होंने बताया है कि सिर्फ जाति का विनाश व उनके द्वारा रूढ़िवादी विचारों के खात्मे से ही दलित विकास सम्भव नहीं है। बल्कि भारतीय सामाजिक संरचना का पुर्ननिर्माण हो जिसमें सबको समान रूप से संसाधन, शक्ति संरचना व सामाजिक आर्थिक रूप से समान भागीदारी

थोरात (2008) की पुस्तक दलित साहित्य का रूढ़िवादी स्वर के अध्ययन से यह बात स्पष्ट है कि दलित-मुक्ति व उनके संघर्ष के ऐतिहासिक रूपरेखा की चर्चा विस्तार से की गई है। जिसमें उन्होंने बताया है कि मनुस्मृति के तालिबानी विचारों के कारण दलित महिलाएं आज भी दोहरा अभिशाप को झेलने पर मजबूर हैं। एक ऐसे समाज की स्त्री जिसे आधुनिक समाज में भी सबसे पीछे के पायदान पर रखा गया है। जिसे इस आधुनिक युग में समाज के समक्ष अस्मिता बनाये रखने के लिए कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। थोरात (2008) की पुस्तक दलित इन इंडिया आ प्रोफाइल के अध्ययन में वो कहते हैं कि समकालीन भारत में दलित अधिकार में कई विस्तार आया है। मानव-विकास संकेतक में यदि देखा जाए तो 1947 के बाद दलितों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में विकास हुआ है जो कि दलित चेतना के बढ़ने का प्रतीक है।

गुप्ता (2009) आधुनिक निबंध पुस्तक में बताया है कि दलित स्त्रियों का जीवन सवर्ण स्त्रियों की तुलना में और भी विकृत है। परम्परागत समाज द्वारा उन पर लगाए गए प्रतिबंधों से उनका जीवन अत्याधिक कष्टमय रहा है। उनसे जबरन कुछ कार्य

करवाये जाते थे जैसे-देवदासी, वेश्वावृत्ति करवाना इत्यादि। उषा धीमान व भवरी देवी के उदाहरणस्वरूप बताया गया है कि सामन्ती मानसिकता का कहर इन्हें आज भी कैसे झेलना पड़ता है। और साथ ही साथ सरकार द्वारा विकास कार्यक्रमों से संभावित लक्ष्यों की आलोचना की है। निरंजन कुमार (2010) मन उष्यता के आइने में दलित साहित्य का समाजषारत्र में बताते हैं कि समाज और इतिहास दलितों के लिए जितना बर्बर और अमानवीय रहा, उसके विरुद्ध उनकी प्रतिक्रिया आक्रोशपूर्ण और एक उन्माद के रूप में है। यह स्वाभाविक ही है बल्कि एक सीमा तक नैतिक भी है। भारती (2012) द्वारा लिखे गए डॉ० अम्बेडकर का मूल चिंतन है स्त्री चिंतन में दलित समाज की आर्थिक रूप से स्वतंत्र स्त्रियां, लेखिकाओं के साथ हुए भेदभावपूर्ण व्यवहार से झुब्ध होकर दलित स्त्रियों के लिए अम्बेडकर जी द्वारा राजनैतिक चेतना के बारे में प्रकाश डाला गया। दलित महिलाओं के साथ दुर्भावनापूर्ण बर्ताव जो कि सवर्ण महिलाओं द्वारा बरता जा रहा था उसका खुलकर विरोध किया गया। डॉ० अम्बेडकर द्वारा दलित महिलाओं के राजनैतिक चेतना के लिए किये गये प्रयासों का वर्णन किया है।

राय (2013) की पुस्तक जेण्डर एण्ड कास्ट एक महत्वपूर्ण एवं उच्च विचारों का संकलन है। यह पुस्तक हमें समकालीन नारीवादियों के गैर-जाति व राजनीति के विचारों पर एक दृष्टिकोण प्रदान करती है, जाति व लिंग के आधार पर हो रहे भेदभाव पर चर्चा की गई। परमार (2015) समीक्षा लेखिका दलित महिलाएं एवं उनका सशक्तिकरण के नाम से लिखे गये पेपर में दलित महिला की अस्मिता उसके सम्मान, अधिकार और स्वतंत्रता की स्थिति की चर्चा की है। लेखिका ने भारत सरकार द्वारा चलाए गए कार्यक्रम जैसे-स्वरोजगार योजना, कल्पवृक्ष योजना व विभिन्न राज्यों में घोषित विकास योजनाओं का वर्णन तथा उसकी आलोचना की है तथा पुरुषों की तुलना में हो रहे दलित स्त्रियों के साथ हो रहे दोहरे भेदभाव पर भी उन्होंने चर्चा की है।

भारती (2016) लिखे गये लेख दलित स्त्रीवाद पर बहस में इन्होंने इस बिन्दु पर चर्चा की है कि दलित स्त्रीवाद की अवधारणा और तथ्य समाज में हमेशा से रहे हैं। जिनको दलित स्त्रियों की अपनी अस्मिता, क्षमता व उसके प्रश्नों और मुद्दों के जरिये आसानी से विश्लेषित किया जा सकता है। दलित स्त्रीवाद व सवर्ण स्त्रीवाद की पृष्ठभूमि भिन्न होने के साथ-साथ इनके साथ हो रहे भेद-भावपूर्ण व्यवहार भी भिन्न है। भारती (2016) के प्रकाशित लेख समकालीन नारीवाद और दलित स्त्री का प्रतिरोध में लेखिका ने दलित समाज की लेखिकाओं की आत्मकथाओं का वर्णन किया है। उनमें प्रमुख रूप से ताई कांबले, कौशल्य वैसन्नी, उर्मिला पवार, कुमुद पाण्डे और सुशील टाकमौरै जैसी बड़ी लेखिकाओं की आत्म

कथाएं ही नहीं, बल्कि यह दलित स्त्रियों के जीवन व उनके पीडा के अभिव्यक्ति के मार्मिक दस्तावेज है।

निष्कर्ष

दलित महिलाओं के वर्तमान परिदृश्य को देखने के बाद यह स्पष्ट है कि दलित महिलाओं का सशक्तिकरण और सामाजिक-आर्थिक स्थिति समय की आवश्यकता है। वर्ग, जाति और लिंग के ट्रिपल उत्पीड़न के कारण, दलित महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक गतिशीलता के लिए शिक्षा और अन्य अवसरों तक सबसे कम पहुंच है। महिलाओं की उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अर्थ है ज्ञान प्राप्त करना और लिंग संबंधों को समझना और इन संबंधों को कैसे बदला जा सकता है, आत्म-मूल्य की भावना विकसित करना, वांछित परिवर्तनों को सुरक्षित करने की क्षमता में विश्वास और किसी के जीवन को नियंत्रित करने का अधिकार, विकल्प उत्पन्न करने की क्षमता प्राप्त करना सौदेबाजी की शक्ति का प्रयोग करना और सामाजिक परिवर्तन की दिशा को व्यवस्थित और प्रभावित करने की क्षमता विकसित करना, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अधिक न्यायसंगत सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था बनाना। इस प्रकार सशक्तिकरण और सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अर्थ है व्यक्तियों, घरेलू, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में व्यक्तिगत नियंत्रण की मनोवैज्ञानिक भावना। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक स्वायत्त तरीके से संसाधनों को सोचने, कार्य करने और नियंत्रित करने के लिए अधिकृत किया जाता है। दलित महिलाओं को सशक्त बनाना और उनकी स्थिति बनाना उनके सामने आने वाली समस्याओं को हल करने में एक लंबा रास्ता तय करेगा। सामाजिक कार्यकर्ता और सामाजिक कार्यकर्ता दलित महिलाओं के सशक्तिकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं ताकि वे समाज की मुख्यधारा में आ सकें।

संदर्भ

1. भारती, अनीता (2012)। डॉ। अम्बेडकर का मूल चिंतन है स्त्री चिंतन, स्त्रीकल स्त्री समाज और सोच, पीपी 34-35।
2. कूली, सी.एच. (1909). सामाजिक संगठन। न्यूयॉर्क चार्ल्स स्क्रिबनर संस.
3. दुबे, ए.के. (2007). आधुनिकता के आईना में दलित। दिल्ली वाणी.
4. कुमार, निरंजन. (2010) मनुस्यता के आने में दलित साहित्य का समाज। नई दिल्ली अनामिका।

5. मजूमदार, डी.एन. (1999)। भारत की जाति और संस्कृति। न्यूयॉर्क टॉपलिंगर.
6. ओमन, टी.के. (2004). विकास डिस्कोउज़ मुद्दे और चिंता। नई दिल्ली रजेंसी।
7. राम, नंदू. (2008). समकालीन भारत में दलित खंड. नई दिल्ली सिद्धांत।
8. राय, अनुपमा. (2013). समकालीन भारत में शाइनिंग का लिंग और जाति खंड नई दिल्ली महिलाओं के लिए काली।
9. शाह, घनश्याम (सं.) (2007). दलित पहचान और राजनीति। नई दिल्ली: साधु
10. सिंह, जेपी (2016). आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन। नई दिल्ली पीएचआई रीनिंग प्राइवेट लिमिटेड।
11. लुई, प्रकाश. (2004)। उत्तर भारत पर दलित अभिकथन, इंटीग्रल लिबरेशन, वॉल्यूम 8, पी -2।
12. ओमवेत, गेल (2005)। पूंजीवाद वैश्वीकरण, दलित और आदिवासी, आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, खंड 10, पीपी 2611।
13. रूथ, मनोरमा (2013)। दलित महिलाओं को दलितों के नीचे, दलित महिलाओं का राष्ट्रीय संघ। भारत, पीपी 45। 14. पीएम बखशी (2015) द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग, नई दिल्ली।
15. आनंद सुगंधे और विनोद सेनरू (सितंबर 2015), महाराष्ट्र में अनुसूचित जातिरू उनके सामाजिक-आर्थिक विकास में संघर्ष और बाधाएं जर्नल ऑफ इंडियन रिसर्च (आईएसएसएन; 2321-4155) वॉल्यूम -3, पी -64
16. मीना आनंद (2014)। दलित महिला भय और भेदभाव ईशा बुक्स, नई दिल्ली। मुदलियार, शिवाजी विश्वविद्यालय प्रकाशन, कोल्हापुर।
17. सविता ठाकुर जोशी, (2008) महिला और विकास-बदलते परिदृश्य, मितली प्रकाशन, नई दिल्ली

18. एस. गोकिलवानी (2008) विवाह, दहेज प्रथा और तलाक रीगल प्रकाशन, नई दिल्ली

Corresponding Author

Neha Maurya*

Research scholar, Sociology department, Lucknow University, Lucknow